शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मई 2014

मीडिया और समाज: एक विवेचन
उत्तर-आधुनिकतावाद के विशेष संदर्भ में

भोजराज बारस्कर (शोधार्थी)
भाषा अध्ययनशाला
देवी अहिल्या विश्वविद्यालय
इंदौर, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

प्रस्तुत शोध आलेख 'मीडिया और समाज: एक विवेचन' (उत्तर-आधुनिकतावाद के विशेष संदर्भ में) के अन्तर्गत सर्वप्रथम उत्तर आधुनिकतावाद को स्पष्ट किया गया है। तत्पश्चात मीडिया और समाज का अंतःसम्बन्ध बताया गया है। जनसंचार के विविध माध्यमों का परिचय देते हुए उत्तर-आधुनिकतावाद के संदर्भ में मीडिया की प्रयोजनीयता पर प्रकाश डाला जाएगा। सामाजिक विकास में मीडिया की भूमिका और उसके योगदान पर एक विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

भूमिका

जनसंचार माध्यमों का प्रारम्भ सामान्य रूप से उसी दिन से हो गया था, जिस दिन से चेतना युक्त मनुष्य का इस धरती पर जन्म हुआ। चेतना के विकास के साथ ही मानव ने सूचनाओं के आदान-प्रदान की क्षमता बढ़ाने की कोशिश की। इसके परिणाम स्वरूप संचार के अनेक जनसंचार माध्यमों का उदय हुआ। लेकिन मुख्य सवाल यह है कि क्या इन विभिन्न संचार माध्यमों का प्रभाव लोगों पर भिन्न-भिन्न प्रकार का होता है या एक सा होता है ? इस बात का जवाब पाने के लिए इस बात पर विचार करना होगा कि क्या सभी तरह के जनसंचार माध्यम समाज में एक सी भूमिका निभाते हैं। जैसे क्या हम यह कहने की स्थिति में हैं कि जो भूमिका रेडियो निभा रहा है वही समाचार भी निभा रहे हैं। यहाँ तक कि दृश्य माध्यमों में परिगणित होने वाले दो प्रमुख माध्यम सिनेमा और टेलीविजन की भूमिका एक सी है। तब यह प्रश्न भी उठता है कि आखिर इनकी भूमिका किस बात से तय होती है। एक माध्यम के रूप में इसकी विशिष्ट तकनीकी संरचना से या उस माध्यम के द्वारा संप्रेषित होने वाले संदेश की प्रकृति से। आज स्थिति यह है, कि उद्योग हो अथवा कोई भी महत्वपूर्ण योजना, चिकित्सा का क्षेत्र हो अथवा मनोरंजन की दुनिया, जनसंचार के अभाव में उसके अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती। किन्तु जहाँ एक ओर संचार माध्यमों के विकास ने मानव समाज की कई समस्याओं का समाधान करके समाज को नई दिशा प्रदान की वहीं दूसरी ओर संचार माध्यमों ने कई समस्याओं को जन्म देकर मानव समाज को पथ भ्रष्ट भी किया है। अतः मीडिया और समाज के अन्तः संबंध को उत्तर-आधुनिकतावाद के विशेष संदर्भ में समझने की जरूरत है। तभी हम उत्तर आधुनिक मीडिया और समाज में उसकी भूमिका को समझ सकते हैं। इसी उत्तर आधुनिकतावाद

के संदर्भ में मीडिया और समाज का विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

उत्तर आधुनिकतावाद

बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध उत्तर औद्योगिक क्रांति का युग है। इस युग में समाज, संस्कृति, राजनीति, कला, साहित्य, दर्शन, संगीत, इतिहास, अर्थ-व्यवस्था और पूरे मानव-चिंतन में जो परिवर्तन-चक्र तीव्र गति से घूमा है- उस स्थिति-परिस्थिति की ओर ध्यान दिलाने वाला नाम है- 'उत्तर-आधुनिकतावाद'। उत्तरआधुनिक, उत्तरआधुकिता, और उत्तरआधुनिकतावाद शब्दों का कोई सर्वसम्मत अर्थ या परिभाषा तय नहीं हो पायी है। शाब्दिक स्तर पर 'उत्तरआधुनिक' शब्द 'उत्तर+ आधुनिक' इन दो शब्दों से मिलकर बना है, जिसका अर्थ आधुनिक का विकसित परवर्ती रूप भी हो सकता है और आधुनिक के बाद का उसका विरोधी रूप भी हो सकता है। 'उत्तरआधुनिकता' उत्तरआधुनिक विशेषण से बनी संज्ञा है। उत्तर आधुनिकता से जब उत्तरआधुनिकतावाद बनता है, तब उसका शब्दार्थ होगा- आधुनिकता की परवर्ती विचारधारा या उसकी विरोधी धारा। एक विचार पद्धति या विचारधारा के रूप में उत्तरआधुनिकतावाद अत्यन्त विवादास्पद है। लेकिन इतना निश्चित है कि जैसे आधुनिकतावाद पूंजीवादी व्यवस्था की उपज था, वैसे ही उत्तरआधुकितावाद उत्तरपूंजीवादी व्यवस्था की उपज है। इस व्यवस्था के केंद्र में प्रौद्योगिकी और उपभोगवाद (बाज़ारवाद) है। यदि प्रौद्योगिकी के विकास ने ज्ञान के स्वरूप, उसके अर्जन और उसके वितरण में क्रान्ति ला दी है तो उपभोगवाद ने बाज़ार को केंद्रस्थ कर दिया है, और ये दोनो परस्पर संबद्ध हैं। इनके कारण पूरा विश्व सूचना (मीडिया)-समाज बनता जा रहा है और हर व्यक्ति उपभोक्ता बनता जा रहा है। उत्तर-आधुनिकता मूलतः पश्चिम के अधिनायकत्व का वह नया विचार या वैचारिक अस्त्र है, जो विश्व विजय के लिए गढ़ा गया है। कृष्णदत्त पालीवाल इसे 'तकनीक का पश्चिम अश्वमेध' जिसमे घोड़ा अमरीका का और कोड़ा फ्रांस और ब्रिटेन का बताते हुए कहते हैं कि यह घोड़ा अपनी रौंद पूरी दुनिया में मार रहा है। कभी धर्म लोगों के लिए अफीमवाद था अब अफीमवाद लोगों का धर्म बन गया है।" यह अफीमवाद और कुछ नहीं बाजार ही है। महत्वाकांक्षाओं का बाजार/चीजों की जरूरत का बाजार है। मीडिया और समाज का अन्तःसम्बन्ध: 'मीडिया' शब्द अंग्रेजी के मीडियम का बहुवचन है, जो संचार के साधनों रेडियो, टेलीविजन, समाचार-पत्र, वीडियो, कंप्यूटर, इंटरनेट आदि के लिए प्रयुक्त किया जाता है। जिनका कार्य जनसमूह के बीच सूचना-संचार हैं। विद्युत तरंगायित या मुद्रित सभी जनसंचार के माध्यम मीडिया कहलाते हैं। संचार माध्यम हमारे जीवन से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं 'समाज' में संचार माध्यम हमारे व्यक्तिगत और सामाजिक क्रिया कलापों से घनिष्ट संबंध रखते हैं। इनकी इसी व्यापक भूमिका के कारण इन्हें जनसंचार के माध्यम कहा जाता है। सुहैल अंजुम ने मीडिया और समाज के संबंध को इस प्रकार बताया है- "जब हम मीडिया और अपने समाज की बात करते है तो यह हिन्दू समाज, मुस्लिम समाज या फिर हिन्दुस्तनी समाज नही होता, बल्कि यह 'विश्व' समाज होता है, ग्लोबल सोसायटी होती है। मीडिया का दामन विस्तृत हो गया है उसमें तंगनाए ग़जल की शिकायत नही है।" जिस तरह मानव जीवन की पूर्णता के लिए समाज का होना

आवश्यक है, उसी तरह समाज की कार्य प्रणाली को सुचारू रूप से चलाने एवं समाज को संगठित व व्यवस्थित बनाये रखने के लिए मीडिया का विशेष मार्गदर्शन आवश्यक है। मीडिया और समाज के अन्तःसम्बन्ध को जानने के लिए माध्यमों की सामाजिक भूमिका को समझना जरूरी है। माध्यमों की मुख्य रूप से तीन सामाजिक भूमिकाएँ हमारे सामने आती हैं- (1) समाजीकरण (2) सामाजिक परिवर्तन और (3) सामाजिक नियंत्रण । समाजीकरण की प्रक्रिया यह है जिसमें मनुष्य सामाजिक, सांस्कृतिक विधियों को सीखकर एक सामाजिक प्राणी बनता है तथा इस प्रक्रिया के मूल मे संचार होता है जिसके माध्यम से परंपराओं का हस्तान्तरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में होता है। मूल्यों, संस्कारों और अन्य रीति-रिवाजों का यह निरन्तर हस्तान्तरण मनुष्य को एक जैविकीय प्राणी से सामाजिक प्राणी बनने में मदद करता है। इसी तरह सामाजिक परिवर्तन में भी हम माध्यमों की भूमिका को अत्यन्त महत्वपूर्ण मानते हैं। संचार विशेषज्ञ एबर्ट रोजर्स का मानना है कि "माध्यम ही समाज में नए विचारों को प्रतिपादित करते हैं।" समाज विज्ञानी आगबर्न के विचारों में "प्रौद्योगिकी, पर्यावरण में परिवर्तन लाती है तथा इस परिवर्तन के प्रति हमें अनुकूलित होना पड़ता है।" आगबर्न ने प्रौद्योगिकी को सामाजिक परिवर्तन का महत्वपूर्ण कारक माना है। इसी तरह यदि माध्यमों की तीसरी सामाजिक भूमिका को सामाजिक नियंत्रण के रूप में देखें तो यह नियंत्रण एक ऐसी प्रक्रिया है जो मनुष्य को समाज के प्रति जवाबदेह बनाती है, तथा सामाजिक संरचना को सुरक्षित एवं संरक्षित करने का कार्य करती है। सामाजिक नियंत्रण में यह अपेक्षा की जाती है कि समाज के विभिन्न सदस्यों का व्यवहार समाज की आवश्यकतानुसार नियंत्रित किया जा सके। इसमें विचारधाराएँ, लोक, रीति-रिवाज, प्रथाएँ, नैतिक मूल्य, धर्म, कानून और षिक्षा आदि तत्त्व महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

मीडिया की प्रयोजनीयता

भूमंडलीकरण के दौर में मीडिया में बहुराष्ट्रीय कंपनियों का प्रवेश हुआ, जिसने राष्ट्रीय और क्षेत्रीय भाषाओं पर अंग्रेजी का वर्चस्व कायम करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विज्ञापन की भाषा प्रचार का एक महत्वपूर्ण हथियार है विज्ञापन-निर्माता विज्ञापन में दृष्य-बिंबो तथा प्रस्तुतीकरण के साथ विज्ञापन की भाषा को कलात्मकता देकर उसे जीवंत और शक्ति संपन्न बनाने की कोशिश करते है, जिससे विज्ञापन में भाषिक विचलन आ जाता है। उत्तर आधुनिक मीडिया की नई बाजारवादी व्यवस्था ने भारतीय सांस्कृतिक चिंतन धाराओं को चौपट कर दिया है। अपनी सांस्कृतिक चिंतन-परंपराओं की स्मृति से विच्छिन्न नई पीढ़ी पश्चिम की ओर जाने के लिए लाचार हो गई। और मीडिया इसके लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यही नहीं उपभोक्ता संस्कृति और बाजार ने हमें यह सिखाया है कि ग्राहकी अपनी क्षमता से और जरूरत से ज्यादा खरीदे और नये ब्राण्ड और नये फैशन को लेने के लिए, पुराने कचरे में डाल दें। उसने हमें पुराने बासी से खिन्न होना, घबराना सिखाया। यह संस्कृति माल को भी अधिकता के नियम पर कचरा करने के लिए बेचती है, तो उसकी आकर्षक पैकिंग से भी कचरा बढ़ाती है। अब करेन्सी भी प्लास्टिक और कचरा भी प्लास्टिक।

उत्तर औद्योगिक समाज ने संस्कृति की अवधारणा को विकृति का नया रूप दिया है वह

रूप जिसमें मानव मात्र भोक्ता है, सृजनकर्ता नही जबकि सृजन मानव की मूल प्रकृति है, मूल मनोरचना है। राजनीति और संस्कृति की ओर संकेत करते हुए कृष्णदत्त पालीवाल का कहना है कि "राजनीति जब संस्कृति के गति-पक्ष को भूल जाती है तब वह सांस्कृतिक पुनरूत्थान में डूबकर अतीत गौरव का राग गाती है। यह अतीत-राग नई पीढ़ी की नई चेतना को नहीं सुहाता। यही राग आज भारतीय राजनीति में बज रहा है इसलिए सांस्कृतिक प्रवाह को सही दिशा देने में वह असमर्थ है। मूल्यहीन, सिद्धांतहीन राजनीति की धमा-चैकड़ी में भारतीय संस्कृति थरथरा रही है।" आज हर आदमी में एक खरीददार घुसा है जिसे बाजार द्वारा उकसाया जा रहा है, खरीदने के लिए उसे सुकून नही क्योंकि वह एक ऐसे परिवेश का हिस्सा है जिसमें चारों ओर माल है और बाजार की चकाचौंध है। पहले बताया जाता था कि आवश्यकता आविष्कार की जननी है। जिसकी आवश्यकता होती है, वे चीजें खोजी या बनाई जाती हैं। आज के युग में यह सिद्धांत उलट गया है। अब आविष्कार आवश्यकताओं को जन्म देता है। चीजें पहले बना ली जाती हैं फिर उनके लिए विज्ञापन का सहारा लेकर जीवन में आवश्यक बना दी जाती है। डॉ.रतन कुमार पाण्डेय ने विज्ञापन द्वारा स्त्री की दयनीय स्थिति को इस तरह व्यक्त किया है- "इस विज्ञापन की दुनिया में स्त्री की सुन्दर-छवि, सुन्दर-तस्वीर, जरूरी है। कारपोरेट पूंजीवाद यहीं आकर सफल हो जाता है। हर जवान और खूबसूरत औरत को यह सिखाया जाता है, कि उसकी पहिचान कैसे बरकरार रहे। उसकी छवि अद्वितीय कैसे बनाई जाय? आज विज्ञापन पर खरबों डालर खर्च किये जा रहे हैं। यहाँ प्रश्न उठता है कि इतना धन तथा मानव शक्ति को इसमें क्यों लगाया जा रहा है, इसका केवल एक मात्र कारण यह है कि उत्तर आधुनिक जगत में विज्ञापन एक संतुलित लाभप्रद कार्य करता है। एक व्यंग्यकार ब्रिट ने विज्ञापन का महत्व अपनी व्यंग्यात्मक शैली में इस प्रकार दिया है- "बिना विज्ञापन व्यापार करना किसी खूबसूरत लडकी को अंधेरे में आँख मारना है। तुम तो जानते हो कि उस समय तुम क्या कर रहे हो पर दूसरा कोई नही जानता।" विज्ञापन, फैशन और मीडिया, ये तीन उद्योग उपभोक्तावाद के मुख्य प्रचारक हैं। उद्योग के रूप में इनकी आत्मनिर्भरता इनकी शक्ति और प्रभाव को बढा देती है। तीनों की सामूहिक कोशिश यही रहती है कि उपभोक्ताओं की मांग का स्तर ऊँचा रहे। उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं की बिक्री से प्राप्त धन ही तीनों का आर्थिक आधार है। मीडिया स्त्री की छवि को बहुत ही गलत-सलत ढंग से पेश कर रहा है। वह ऐसी छवि प्रायः पेश करता है जो भारतीय आम स्त्री की छवि से मेल नही खाती। स्त्री को लगभग नग्न रूप से जिस तरह टीवी के पर्दे पर दिखाया जाता है, उसे देखकर लगता है कि देह प्रदर्शन और सौंदर्य की भूख ने स्त्री जाति से मातृत्व का वह त्याग ही छीन लिया है जिस मातृत्व के बल पर समाज में एक आशा जगी रहती थी कि माता के स्नेहसिक्त हाथों से पली पीढ़ी समाज, देश, और मानवता की धरोहर सिद्ध होगी। इस संदर्भ में टी.डी.एस. आलोक का व्यंग्य प्रश्न उचित ही है वे कहते हैं- "हमारे आधुनिक माध्यम और पूरा फैशनेबल समाज स्त्री की त्वचा, देह, कमर और श्रृंगार प्रसाधनों में सौन्दर्य को कैद कर रहे हैं। विश्व में सबसे सुंदर स्त्री कौन होती है, इसका फैसला कौन करता है ? शरीर या कर्म

या भावना या साधना या संघर्ष या प्रतिभा ?" हमारा मीडिया भावना, साधना, कर्म और संघर्ष मूल्य को कोई अधिमान नहीं देता। वह भूल जाता है कि कोई सुंदर स्त्री किसी का संस्करण नही होती। लेकिन भावना कर्म और संघर्ष के स्तर पर वह स्त्री असंख्य स्त्रियों को अपने जैसा बना सकती है। यह अंतःप्रेरणा देने में हमारा मीडिया नितांत असफल है। मीडिया से प्रभावित आज की युवाशक्ति संवेदन-शून्य होती जा रही है, और उनकी सोचने और विचार करने की शक्ति भी एक मशीन की भांति कार्य करने लगी है, जिसमें संवेदना का अभाव है। इस संदर्भ में डॉ.अर्जुन तिवारी का कथन है- "इलेक्ट्रोनिक समाचार-पत्रों और आज की संवेदन-शून्यता एक चिंता की बात हो रही है। पलक झपकते ही हम दूर-दूर तक पहुँच जाते हैं किंतु अपने ही पड़ोसी से दूर ही रहते है। वर्तमान का बहुत बड़ा संकट संवेदन-शून्यता विचार-शून्यता का है।" आज सिनेमा प्रचार का एक मुख्य साधन है, जिससे जनजीवन की रूचियों को, आचार-विचारों को सरलता से किसी भी दिशा में मोडा जा सकता है। चित्रों में मानवीय भावनाओं को छू लेने की अद्भुत शक्ति होती है। यही कारण है कि चलचित्रों के इशारों पर उनके अनुकरण पर बालक, युवा और वृद्ध कुछ भी कर गुजरते हैं। टी.वी. के कार्यक्रमों में किस तरह व्यापार की भावात्मक युक्तियां प्रयोग मे ली जाती हैं। इसे कालूराम परिहार ने इस प्रकार स्पष्ट किया- "टेलीविजन कार्यक्रम मानव रूचि के प्रत्येक क्षेत्र को अपनी विषयवस्तु बनाते हैं और प्रस्तुतीकरण के नए-नए प्रारूप इस्तेमाल करते हैं। इनके प्रस्तुतीकरण और नाटकीयकरण की विविधता के चलते ये अलग-अलग रूचियों और आयु-वर्ग के लोगों को अलग-अलग ढंग से आकर्षित भी करते हैं।" सामाजिक विकास में मीडिया का योगदान: मीडिया और समाज का बहुत गहरा संबंध हैं। सूचना और मनोरंजन के साधन के रूप में मीडिया हमारे सामाजिक जीवन मे कई प्रकार के कार्य करता है और हमारी अनेक प्रकार की जरूरतों की पूर्ति में सहायक बनता है। वह सामाजिक जीवन में सूचनाओं, छवियों, समाचारों, विचारों आदि की आपूर्ति करता है- कभी अपेक्षित रूप से हमारी सामाजिक आवष्यकताओं के अनुसार, कभी आर्थिक लाभ के लिए, कभी अपना रूतबा और प्रभाव बढाने के लिए, तो कभी अन्य सामाजिक संस्थाओं के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए। इस प्रकार सामाजिक और सांस्कृतिक रूपांतरण की प्रक्रिया में मीडिया का महत्व असंदिग्ध है। ज़ाहिर है कि मीडिया का उद्भव और विकास समाज की सांस्कृतिक आवष्यकताओं की पूर्ति के साधन के रूप में हुआ। गृह पत्रिका जनसंपर्क के साधन के रूप में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। यह एक अच्छा जनसंपर्क का सबसे उत्तम और उपयोगी माध्यम है। रेडियो पर सभी श्रोता के कार्यक्रम उपलब्ध रहते हैं। इसके अतिरिक्त रेडियो संचार का काफी सस्ता साधन है जिसे आसानी से कोई भी क्रय कर सकता है जो विद्युत रहित क्षेत्र मे भी सुना जा सकता है। आकाशवाणी समाज में विचारों के संप्रेषण का एक श्रेष्ठ माध्यम है। इसके श्रोता का विद्वान होना जरूरी नहीं और न ही अमीर। गरीब, अमीर एवं नेत्रहीनों में भी इससे जनसंचार होता है। टेलीविजन के माध्यम से भारतीय सभ्यता, संस्कृति, धर्म और आदर्शों पर आधारित ऐतिहासिक धारावाहिकों का भी निर्माण किया जिसने भारतीय परंपरा को सही दिशा प्रदान कर जनमानस को समृद्ध किया। इन धारावाहिकों में

रामायण, महाभारत, श्रीकृष्ण और जय हनुमान का फिल्मांकन करके सदियों पुराने इतिहास को जीवंत किया है। इसी तरह सामाजिक धारावाहिकों में विरासत, समझ, घुटन, दर्द, नीम का पेड़, रजनी, कुंती, आप बीती जैसे सामाजिक धारावाहिकों ने वर्तमान समाज की त्रासद, गोदान स्थितियों को उजागर किया है। इंटरनेट एक शक्तिशाली माध्यम है। इसके आगमन से सारा विश्व सिकुडकर मुट्ठी में आ गया है। यह बिखरती दुनिया को जोडने की एक अत्याधुनिक विकसित संचार प्रणाली है। शिक्षा के क्षेत्र में जिसमें 'भाषा विज्ञान', 'अनुसंधान' और 'अनुवाद' आदि में व्यापक स्तर पर इलेक्ट्रोनिक यंत्रो का सफलतापूर्वक उपयोग किया जा रहा है। मीडिया ने रोजगार के अनेक द्वार खोल दिए है। चूंकि मीडिया का क्षेत्र अत्यंत व्यापक एवं विस्तृत हो गया है, जो कई शिक्षित बेरोजगारों को रोजगार दे सकता है। संचार स्वदेश-प्रेम की भावना को विकसित कर नागरिकों को राष्ट्रीय हितों के लिए तत्पर होने की प्रेरणा देता हैं, विध्वंसक प्रकृतियों से नागरिकों को सचेत करता है। राष्ट्रहित के प्रति समर्पण और राष्ट्रीय संस्थाओं के प्रति आस्था के भाव जगाकर संचार के साधन (मीडिया) विकास-मार्ग को प्रशस्त करते हैं। जनसंचार के माध्यमों ने राष्ट्रहित में आत्मज्ञान, आत्मविश्वास तथा आत्मोन्नति का रास्ता बतालाया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व हमारे देश को आजाद करने के लिए अनेक देशभक्तों के नारे हिंदी समाचार पत्रों में प्रकाशित होकर देश की जनता को स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित करते रहे। बाल गंगाधर तिलक का सिद्धांत था- "स्वतंत्रता मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है, मैं इसे लेकर रहूँगा।", गाँधी जी का नारा- "करो या मरो", सुभाषचन्द्र बोस का "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हे आजादी दूंगा।".....आदि। इस प्रकार के संचार ने देश को आजाद कराने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। समय-समय पर होने वाले सांप्रदायिक दंगो को मिटाकर देश में राष्ट्रीय एकता और धार्मिक समन्वय लाने का स्तुत्य प्रयास आकाशवाणी ने किया है। भारत के प्राचीन संतों एवं भक्त कवियों की वाणी को समय-समय पर आकाशवाणी ने प्रसारित किया। विश्वधर्म की सद्भावना में मीडिया की भूमिका महत्वपूर्ण है। आज सूचना प्रौद्योगिकी की मदद से ग्रामीण भारत का विकास तीव्र गति से हो रहा है। सुदूर गांव में बैठा व्यक्ति इंटरनेट के माध्यम से पलक झपकते ही सारी दुनिया से संपर्क स्थापित कर रहा है। हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं विकास का एक प्रमुख कारण यह है कि वह भारत की अधिकांश जनता की भाषा है, मीडिया द्वारा इसी कारण हिंदी का प्रयोग जनसंपर्क बनाने के लिए किया जाता है। अतः माध्यमों के द्वारा हिंदी का व्यापक क्षेत्र में प्रचार-प्रसार हो रहा है। जिसके कारण अहिंदी भाषी लोगों ने भी समाचार-पत्र, रेडियो, सिनेमा, दूरदर्शन और इंटरनेट के माध्यम से हिंदी की जानकारी प्राप्त की है। इसके अलावा हिंदी के प्रादेशिक लेखकों एवं साहित्यकारों ने हिंदी में अपनी प्रांतीय भाषाओं की रचनाओं का अनुवाद तैयार करके हिंदी को समृद्ध किया। इसी प्रकार भारतेन्दु जी ने हिंदी को राजपद दिलाने की मांग बडी वेदना के साथ राजभाषा के पद पर विराजी उर्दू भाषा के विरोध में इन शब्दों में की है- "निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को सूल।।" समाचार पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी में बहुत से अनूदित उपन्यास, कहानी, लेख, रेखाचित्र,

संस्मरण आदि प्रकाशित किए जा रहे है। इस प्रकार हिंदी के इन्द्रधनुषी रंग को और अधिक रंगाने में हिंदीतर प्रांतों में लिखी गई मौलिक एवं अनूदित रचनाएं समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। हिंदी फिल्में भारत के सभी प्रांतो में दिखायी जाती हैं। भारत के सभी घरों में हिंदी सिनेमा लोकरंजन एवं लोकशिक्षा का प्रभावी साधन बना है। हिंदी सिनेमा का सफर आज नई डिजिटल तकनीक, वैज्ञानिक आधार तथा नए सामाजिक मूल्यों का प्रतीक बन गया है। हिंदी फिल्मों के निर्माण में सहयोग करने वाले अधिकांश व्यक्ति अहिंदी भाषी रहे हैं। गायकों एवं संगीतकारों ने हिंदी के प्रचार-प्रसार में योगदान दिया तो उधर दक्षिणात्य अभिनेत्रियों एवं अभिनेताओ ने भी हिंदी सिनेमा को बढ़ावा दिया है। वैश्विक स्तर पर हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं हिंदी भाषा के विकास में अप्रवासी भारतीय भी योगदान दे रहे हैं। हिंदी बोलचाल को प्रसारित करने में सिनेमा की भूमिका हिंदी साहित्य से अधिक महत्वपूर्ण रही। इस प्रकार विदेशी संस्कृति के खिलाफ संघर्ष करने के लिए व भारतीय संस्कृति को बचाने में हिंदी भाषा और हिंदी सिनेमा सदैव तत्पर रहेंगे।

निष्कर्ष

माध्यमों पर प्रसारित कार्यक्रमों में अभूतपूर्व परिवर्तन देखने को मिल रहा है। सेटेलाइट तथा कंप्यूटर तकनीक ने प्रसारण माध्यमों में व्यापक परिवर्तन कर सूचना क्रांति का एक नया अध्याय जोड़ दिया है। मीडिया को एक ऐसी सोच, ऐसी भाषा शैली भी खोजनी होगी जिससे इस देश के प्रत्येक जन के दुःख-सुख, हर्ष-विषाद, उत्थान और पतन को अन्तरंग अभिव्यक्ति मिल सके और यह माध्यम सर्वग्राह्य भी बन सके। अतः इन सभी माध्यमों पर एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी है कि वह देश निर्माण में अपना सार्थक योगदान दे। हमारे सभी सूचना माध्यम ज्ञान के, विवेक के तथा प्रतिभा के प्रखर प्रतीक बने। सूचना का प्रवाह निरंतर हैं, उसे रोका नहीं जा सकता, यह नेटवर्क व्यापक है और इसके प्रभाव को कम नही किया जा सकता हैं। बस इसे आज के समय की जरूरतों के अनुसार आज के समाज की एक अच्छी उत्तर-आधुनिक संस्कृति और सभ्यता के रूप में इस्तेमाल किया जाये। भारत में जहां अब भी हम गरीबी और निरक्षरता, अविकसित समाज, सामंतवादी संस्कृति, सामाजिक विषमता के चक्रव्यूह में जूझ रहे हैं, इन संचार माध्यमों से सृजनात्मक रूप से जुड़कर एक ऐसा फीड बैक तैयार किया जा सकता है जो समाज को पूरी तरह बदल दे। लेखकों की एक ऐसी टीम इस नेटवर्क से जुड़े जो विभिन्न समस्याओं के संबंध में सरल और संप्रेषित होने वाले विभिन्न प्रकार के साहित्य का सृजन करें। यह साहित्य केवल कहानी या कविता न हो बल्कि विज्ञान, खेल, चिकित्सा, समाज मनोविज्ञान, जैसे अनेक क्षेत्रों से जुड़ा हो।

संदर्भ-ग्रंथ

1 मीडिया लेखन सिद्धांत और व्यवहार: डॉ.चन्द्रप्रकाश मिश्र संजय प्रकाशन, नई दिल्ली द्वितीय संस्करण: 2003
2 संचार से जनसंचार: रूपचन्द गौतम, श्री नटराज प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण: 2003
3 हिंदी पत्रकारिता और जनसंचार माध्यम, डॉ.जितेन्द्र वत्स, निर्मल पब्लिकेशंस, दिल्ली संस्करण, 1994
4 जनसंचार और हिन्दी पत्रकारिता, डॉ.अर्जुन तिवारी, जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद संस्करण: 2004
5 उत्तर आधुनिक साहित्य विमर्श : सुधीश पचौरी, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण: 2000

6 आधुनिकतावाद और दलित साहित्य : कृष्णदत्त पालीवाल, वाणी प्रकाशन, दिल्ली- संस्करण 2008,

7 उत्तरआधुनिक मीडिया विमर्श: सुधीश पचौरी, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण: 2006

8 पत्रकारिता और समाज: संतोष कुमार, ओमेगा प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण: 2008

9 उत्तर आधुनिकता की ओर : कृष्णदत्त पालीवाल, आर्य प्रकाशन मंडल दिल्ली, संस्करण : 2007

10 मीडिया के समाजिक सरोकार : कालूराम परिहार, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2008

11 उत्तरआधुनिकता कुछ विचार, देवशंकर नवीन: सुशांत कुमार मिश्र, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2000

12 मीडिया का यथार्थ : डॉ..रतनकुमार पाण्डेय, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2008

13 टेलीविजन, संस्कृति, और राजनीति: जगदीश्वर चतुर्वेदी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2004